P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-8* (Part-1) April- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भुनेश्वरः तबीयत के बादशाह

रामाश्रय सिंह
वरिष्ठ स0 प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,
वाराणसी, यू0 पी0, भारत

सारांश

भुनेश्वर जी तबीयत के बादशाह थे। तबीयत के बादशाह से तात्पर्य यह है कि अपनी रचनाओं के पूर्ण अध्येता जीवन भर बने रहे। जन्म मरण में बादशाहत! कोई निश्चित तिथि नहीं मिलती। आशावादी और समस्त चिंतायें यमराज के हवाले करने वालें नवयुवक थे। रात–दिन, हास–परिहास, ताश, हाइकिंग में कट जाता था। उनको कोई चिन्ता नहीं थी, न ही उनके जीवन में कोई अवकाश था। यही कारण है कि उनकी कहानियों, एकांकियों, में बादशाहत दिखाई देती है। उनका व्यक्त्वि अराजक जीवन शैली का कायल था। अपनी रचनाओं के माध्यम से उन्होंने जीवन की एक अलग परिभाषा गढ़ ली थी। जीवन क्या है? सुख और दुःख, राग और बिराग, प्रेम और घृणा, करूणा और वैराग्य इसी को स्वीकार किया। उनकी बादशाहत का प्रमाण उनका लिबास था, जो बोरे या तुगड़े के थे। वे इस दुनिया को प्यार करते थे, और चाहते थे कि यहाँ का सामान्य आदमी भी एक अच्छी सम्मानित जिन्दगी जीये। यानी मानव प्रेम। यही दुनिया, यही बादशाहत का मूल मंत्र है। दुनिया में जीवन तो सबका है, लेकिन बादशाहत किसी–किसी को नसीब होती है। मेरा मानना है कि बादशाहत उसी को नसीब होगी जो मानव से प्रेम करेगा। अन्यथा उसका जीवन कुछ भी हो सकता है। यही नहीं वे अनजानी भीड़ में भी अपनी राह बनाते हैं। संघर्ष करते हैं और अपनी पताका फहराते हैं यही सार है जीवन का। इससे हम सब को शिक्षा मिलती है जीवन के अर्थ को समझने में।

मुख्य शब्द : तबीयत, बादशाहत, अध्येता, हाइकिंग, प्लैग, शैतान, ताँबे के कीड़े, स्वप्न द्रष्टा, आदि।

प्रस्तावना

भुनेश्वर का जन्म शाहजहाँपुर में हुआ था। जहाँ के क्रान्तिकारी अश्फाकउल्ला थे। उनकी हवेली रंगमहल कहलाती थी। रंगमहल का प्रभाव की 1931 में यूथलीग के साथ होकर अंगेजों की खिलाफत में लग गये। उनका नारा था– अप अप इन्डियन प्लैग/डाउन डाउन यूनियन जैक। इस यूनियन के झंडे का रंग लाल था। दूसरे शब्दों में कहें तो बामपंथी विचार धारा के थे। मैट्रिक होते हुए भी उर्दू, हिन्दी, तथा अंगेजी पर उनकी जबरदस्त पकड़ थी। यही नहीं यूँ कहें वे सिर्फ अपनी रचनाओं से ही बात करते थे और कहते थे लिटरेचर तो बेटर लाइफ के लिए एक प्रोपेगंडा है। इसलिए उनके जीवन की तीन तिथियाँ 1910, 1912, 1914 और मृत्यु भी 1957 में, स्थल को लेकर मतभेद है। कोई बनारस, कोई लखनऊ लेकिन सच है कि वे लावरिस अवस्था में भिखारियों के जमात में मृत पाये गये थे। तीसरी और आश्चर्य की बात वे कहीं टिककर कोई स्थायी काम नहीं कर पाये थे। भुनेश्वर जी में प्रतिभा गजब की थी। आज क्या स्थिति होती बयाँ नहीं की जा सकती। भुनेश्वर जी 1933 से 1935 तक का जो लेखन है– उसी से एकांकीकार होने की मुहर लगती है। जैसे– प्रतिभा का विवाह, एवं श्यामाः, एक वैवाहिक विडम्बना (1933) में साम्यहीन, साम्यवादी (1934) में एवं कारवॉ (1935) में जबकि कहानी 1334 में ''मौसी'' हँस में प्रकाशित होती है। 1941 में आखिरी कहानी 'आजादी चाँद'' में प्रकाशित होती है। वे स्वयं प्रशिक्षित थे। वे बहुत तीक्ष्ण बुद्धि के व्यक्ति थे। उनकी निरीक्षण शक्ति बहुत कुशल थी। भुनेश्वर जी चीजों को भिन्न नजरिये से देखते थे।

उपकल्पना

1. ''भुनेश्वर जी में कहने की शक्ति है, मर्म को हिला देने वाली वाक चातुरी है।
2. तबीयत के बादशाह थे। माथे पर लिखी भाषा से भी अधिक सजीव होती है मन की भाषा। मौन से अच्छा संभाषण भी कुछ हो सकता है?
3. कटुता/कुटिलता वे नहीं जानते। ये दोनो हाथों से नेह लुटाना जानते थे। नेह बाँटना और उसके बदले में कुछ नहीं चाहते थे। उनका मानना था कि स्वर्ग और नरक की चाभी आदमी के हाथ में है।

शोध पद्धति

1. भुनेश्वर जी की शोध पद्धति का प्रमाण उनकी कहानी ''हाय मानव हृदय'' के ही एक पात्र से मिलती है। पात्रों के मन में छोटी–छोटी तुच्छ बातों से उत्पन्न होने वाले उव्देलन का सूक्ष्म चित्रण। यानी रचनात्मक पद्धति का प्रयोग है।
2. भुनेश्वर जी किस तरह की दुनियाँ चाहते थे, वैसी दुनिया सम्भव नहीं थी। अन्तर्मन की पीड़ा है। हालांकि अन्दर से वे इस दुनिया को प्यार करते थे, वे चाहते थे कि सामान्य आदमी भी एक अच्छी सम्मानित जिन्दगी जीये। यहाँ तार्किक शैली की पुट मिलती है।
3. लेखक ने इसे बड़े बेलाग ठंग से, बिना किसी भावुकता के दिखाया है अपनी कहानी आदमी में–क्या तुम महसूस नहीं करते कि अक्सर हम न अपनी जिन्दगी जीते हैं और न अपनी मौत मरते हैं। पाठकीय क्षुधा की पूर्ति नजर आती है। दार्शनिक चिंतन पद्धति है। जिसमें विश्व दृष्टि छुपी है।

साहित्यावलोकन

मानव के प्रति अगाध प्रेम रखने वाले तथा प्रगाढ़ पीड़ा को वहन करने वाले भुनेश्वर थे। एक मध्य वर्गीय परिवार और स्थान से निकलकर समाज की नब्ज को पकड़ते थे। आज मानवीय और सामाजिक मूल्यों में गिरावटें आयी हैं। सब कुछ फास्ट–फास्ट हो रहा है। यूज एंड थ्रो का जमाना है। किसी के पास किसी के लिए समय नहीं बचा है। चाहे कुछ भी कह लिया जाय समय से कोई बड़ा नहीं है। समय सबको जीना सिखा देती है। सच में भुनेश्वर जी की एकांकी, कहानी समाज के मूलभूत प्रश्नों से जुड़कर संघर्ष के मार्ग के मर्म को स्पर्श कराती है। इनकी एक कहानी है– ''मौसी'' मौसी वृद्धा है। सबसे प्रेम करती है। बसन्त भतीजा है। बसन्त की माँ मर जाती है। अपने भतीजे को पाल–पोस कर बड़ा किया। कुछ दिन के बाद बसंत की पत्नी भी दुनिया से विदा हो जाती है, तो बसंत के पुत्र मन्नू को भी अपने पास रखकर पालन–पोसन करने लगती है। अपनी बहन की कमी, कभी उन्हें महसूस नहीं होने देती। वही बसंत के पिता से भी प्रेम करती थी। उनके साथ बिताये जीवन को कलंक मानती थी पर इससे उसका मानव प्रेम अपनी ऊँचाई नहीं खो सका था।[1] पर भुनेश्वर जी एक दृश्य प्रस्तुत करते हैं– द्वार तोड़कर लोगों ने देखा वृद्धा पृथ्वी पर एक चित्र का आलिगन किए पड़ी है। मानों जिसे वह मरकर अपने मानव होने का प्रमाण दे रही हो। वसंत के अतिरिक्त किसी ने न जाना कि वह चित्र उसी के पिता का था। लेकिन वह भी यह न जान सका कि वह वहाँ क्यों था। वह अनंत के गर्भ में वृद्धा ही उत्पन्न होकर एक अनंत अनिंत्य काल के किए अमर हो गई थी।[2] इस प्रकार उनकी कहानी पूरा का पूरा ग्रामीण पृष्ठभूमि से जुड़ा हुआ है। ऐसा ही पर्वतीय ग्राम ''हायरे मानव हृदय'' में एक पत्नी सारंगी बेचने वाले को दिल दे बैठती है। दुधमुंही बच्ची को उसके पिता के हवाले छोड़कर सारंगी वाले के साथ चली जाती है। दूसरी तरफ बीमार पति को इलाज के लिए डाक्टर साहब के यहाँ पहुँचा देती है। पति का प्रेम चाहे किसी के साथ भागे कभी पति चिन्ता से मुक्त नहीं हो पाती। यहाँ मानव प्रेम का दूसरा रूप दिखाई देता है। ये अलग बात है कि पति की मृत्यु हो जाती है।[3] इसी तरह भुनेश्वर की कहानी में चित्रित है। अपनी बेटी से सत्रह वर्षों तक छिपाये रखी। कन्या तो यही जानती है उसकी माता की मृत्यु उसके जन्म के एक वर्ष बाद ही हो गयी थी। हो सकता हो कि उस अधेड़ पुरूष ने यह बात लक्षणा में कही हो क्योंकि वह औरत उसके लिए मर गयी थी। पर उसकी पुत्री ने इसे सीधे अर्थों में समझ रखा था। उसे पता नहीं था कि उसकी माँ पास के ही नगर में कसब कमा रही है। इसी तरह ''जीवन की झलक'' में भी प्रेम है। जहाँ एक वृद्धा के बेटे, बहुएँ, बेटियाँ उसके मरने का इन्तजार कर रही हैं। लेकिन वृद्धा का कमजोर झूलते हाथ भी अन्दर की प्रेरणा से बेटे की पीठ पर घिसटते रहते थे। उसके लिए यह ममत्व था। मरते दम तक बचा रखा था। इसका संकेत है–कमरे में पूरी खामोशी थी, मरने वाले की सांस भी थकी हुई–सीहरी हुई थी।[4] भुनेश्वर जी की भावनाएँ उस पीड़ित ''मास्टरनी'' कहानी में भी दिखाई पड़ती है। सारी जिन्दगी के छोटे–बड़े घाव अचानक घिसक गये थे। यही उसकी जिन्दगी थी, पर कही कुछ था, जो बाहर आने को बलबला रहा था। इन कहानियों में कथ्य कैसे हैं? फंदे कैसे पड़े हैं? बुनावट कैसी है? कहानियों का भाषा संयोजन कैसा है। सचमुच अपने आस पास के परिवेश, अपने सम्बन्धों, अपने मनोभावों का आईना ही लगेगी, यही तो उनकी बादशाहत है। और क्या है? कोई कहानी बड़ी नहीं है, पर छोटे आयतन में ही बहुत कुछ कह देने का शिल्प मौजूद है। जीवन के छोटे–छोटे प्रसंगों को कहानी की शक्ल में ढाल देना कोई आसान काम नहीं है– ज्वलन्त उदाहरण– ''डाक मुंशी'' में एक तरफ डाक मुंशी है तो दूसरी तरफ गाँव के एक अहीर की भानजी चीना है, जो ससुराल से भाग आई है। वह चीना जिसने अपने उमड़ते यौवन, निखरते सांवले रंग, और नेत्रों के अमृत और विष के कारण एक अक्खड़ पाल लिया था और जवानी को गेंद की तरह उछालती हुई चला करती थी। भुनेश्वर जी की लेखनी शायद यही कहना चाहती है कि कई बार अकारण ही दूसरों की जिन्दगी से उलझकर हम अपना नुकसान कर बैठते हैं।[5] जबकि डाकमुंशी से क्या लेना–देना। उसका काम तो डाक पहुँचाना था, चीना से उसका कोई लेना देना नहीं था। लेकिन सीमाओं पर विजय पाने की कोशिश करता। यही बेचैनी से बादशाहत की शुरूआत भी होती है। जिसका ज्वलन्त उदहारण–झुंझलाहट भुनेश्वर की जिन्दगी में थी। जिसे उन्हें बिल्कुल अकेला कर दिया था। भुनेश्वर जी की बादशाहत ''भेड़िये'' (1988 में) में भी देखने पर मिलती है। लिखते हैं– तुमने कभी भेड़िये को शिकार करते देखा है। वह शेर की तरह नाटक नहीं करता, भालू की तरह शेखी नहीं दिखाता, एक मर्तवा का सिर्फ एक मर्तबा–गेंद सा कूदकर जांघ में गहरा जख्म कर देता है। फिर पीछे, बहुत रहकर टपकते हुए खून की लकीर पर चलकर वहाँ पहुँच जाता है, जहाँ वह शिकार कमजोर होकर गिर पड़ा होता है।[6] यहीं से सामंत बाद का जन्म होता। यानी सामंत वाद पूँजीवाद भेड़िये की तरह हैं, जो कमजोरों पर राज करता है। गौर करने की बात है, भुनेश्वर जी समाज में फैले अपराधी व्यवस्था को

क्यों भेड़िये का ही प्रतीक माना? शायद उन दिनों धूर्त और मक्कारी की चलन रही होगी। भाव कुछ इस तरह का है–राज, पुरूष, योद्धा, सम्राट, इस धरती के स्वामी लोग, मैं असली युद्धा बनकर खेला वरखुदार।[7] भुनेश्वर जी का जीवन उनकी कहानियों एकांकियों में कही न कही. झलक जाता है। प्रेमचद उनकी दृष्टि में सर्वश्रेष्ठ लेखक थे। पश्चिमी नाटककारों तथा मनोविश्लेषकों, लेखकों खास तौर पर इव्सन, शॉ, फ्राइड, डी.एच लारेंस आदि का भुनेश्वर पर काफी प्रभाव है। उन्होंने मनुष्यता के उद्देश्य पूर्ति के लिए प्रतिभा का विवाह (1933) श्यामा, एक वैवाहिक विडम्बना एक साम्य वादी साम्यवादी, शैतान, 1934 ऊसर, लाटरी, रोमांच, रोमांच (1935) आदि एकांकियों का सफल चित्रण किया। उनकी बादशाहत तॉवे के कीड़े में देखने को मिलती है। जिसमें मनुष्य की धन लोलुपता का नग्न रूप प्रस्तुत किया है। सिकन्दर, अकबर, आजादी की नींव आदि में देखने को मिलता है। जिसमें जिन्दगी जीने का राज छुपा है। भुनेश्वर जी के मिजाज को जानने के लिए प्रसाद को जोड़ा जा सकता है। जबकि दोनों दोनों दो ध्रुव पर खड़े हैं। प्रसाद और भुनेश्वर का पीठ लगभग एक ही है। जब जयशंकर प्रसाद का चद्रगुप्त मौर्य (1931) अथवा ध्रुवस्वामिनी (1935) प्रकाशित हुआ उसी समय के आस–पास भुनेश्वर के नाटक छपने लगे थे, श्यामा, प्रतिभा का विवाह (1933) शैतान (1934), रोमांच–रोमांच (1935) हैं संयोग कि दोनों का प्रकाशन भारती भण्डार है। प्रसाद के नाटकों में प्रेम सम्बन्धों की पवित्रता और कोमलता है। ये सब बातें लिखने का वजह कि किस तरह की भुनेश्वर की बादशाहत है? वह झलकता है–भुनेश्वर जी में प्रेम सम्बन्धित मान्यताओं का सहन तिरस्कार बड़ा अटपटा है। भुनेश्वर जी के पात्र कहते हैं–मैं अपनी धर्म पत्नी से प्रेम करता हूँ। (श्माया)'' यदि इस समय कोई आ जाए, तो तुम्हें मेरी धर्म पत्नी समझे (शैतान)'' पुत्री के समान! पर मैं तो प्रतिभा से विवाह करना चाहता हूँ। (प्रतिभा का विवाह है)! आप मिसेज सिंह को अपनी पत्नी के रूप में ले जा सकते हैं बहन के रूप में नहीं (रोमांच–रोमांच) कहने का आशय यहाँ पत्नी, पुत्री, बहिन, प्रेमिका सबके रिश्ते एक दूसरे में गड्डमगड्ड हो गये हैं। इन शब्दों की मर्यादा टूट गई है। तोड़ दी गई है। इस सच को समझने के लिए प्रसाद के पात्रों को देखना होगा–देवसेना, मालविका और ध्रुवस्वामिनी के संसार से यह कितना भिन्न संसार है।[8]

कहना न होगा विकसित प्रविधि के युग में भी कोई हड़बड़ी नही दर्शाता। उनकी शब्दावली अधिकतर ठण्डी और यतिगति एकदम शमित है। जिससे किस कदर नाटक की अपनी गति निर्धारित होती है, अपनी इस अनाटकीय वृत्ति में भुनेश्वर के नाटक समुचे नये नाटक आन्दोलन में अग्रणी भूमिका अदा करते हैं। जहां नाटक कथा वस्तु के धरातल पर न होकर संवेदना के स्तर पर घटित होता है। भुनेश्वर जी के इन साहसिक प्रयोगों जैसे स्ट्राइक में घड़ी के विम्ब, अथवा ऊसर में कागज की पर्चियों का प्रतीकात्मक खेल या ताँबे के कीड़े के समुचे विधान में, पर बुनियादी भाषा ठेठ मध्य वर्गीय बोलचाल की होने से उनका विधान नयी क्षमता से, उनकी बादशाहत तबीयत से सम्पन्न होती है मानों यों अन्तर्जगत की परतें झाँक रही हैं। और जैसा कहा गया है इनकी अन्तर क्रिया में ही असली नाटक घटित होता है। यह भुनेश्वर की महानता थी जिसे अपने भीतर समेटे वे दुनिया को अलविंदा कह गए। उनमें प्रकृति की शक्ति थी। वह हँसते थे, तो उनका हास्य अपनी ही तरह का था। मुझे लगता है कि वह हताशा से हास्य के माध्यम से लड़ते थे। लेकिन यही संदेश भी देते हैं वह समाज जो नहीं जानता कि हार क्या चीज होती है। कभी भी वयस्क नहीं होता।

अध्ययन का उद्देश्य

भुनेश्वर जी के विषय में लिखने का उद्देश्य यह है कि उनकी बादशाहियत को उजागर करना। जैसा कि आजकल के लेखक हैं उनकी कोई पहचान नहीं है। आजकल पहचान है तो कोई न कोई वाद से होती है, जबकि इनकी पहचान मानव प्रेम से है, यानी मानव ही सब कुछ है। जैसा कि उनकी एकांकियों और कहानियों की पड़ताल किया जाय तो–हर देश की जनता भोली होती है, बेहतर जीवन के सपने देखती है। सब में प्रेम, सद्भावना और मानवता होता है। यहाँ गौर करने की बातें हैं–जमींदार, उद्योग पति का औरत बाज होना गौड़ है। उसका आर्थिक शोषण कर्त्ता रूपही उसका असली चाहत है। धर्म और रवायतों के आगे हार प्रेम की ही होती है। एक समय था जब संयुक्त परिवार का जमाना था और तनावपूर्ण जीवन अपवाद था। फिर रिश्तों में बनावट, मिलावट का दौर आरम्भ हुआ। परिणाम एकल परिवारों में बदल गया और भौतिक आकर्षण में खो गया। फिराक साहब की बात ठीक लगती है–हो जिन्हें शक, वो करें और खुदाओं की तलाश/ हम तो इंसान को दुनिया का खुदा कहते हैं। ऐसी सोच भुनेश्वर जी की थी। वह अनुपमेय है। अक्सर सोचते रहते थे, समाज के आदर्श मनुष्य को जैसा होना चाहिए, वैसा नहीं होने पर तत्काल इनकार का साहस पैदा हो। वे दहाड़ते आतंक के बीच फटकार का सच बोलने वाले थे। उनको कोई फिक्र नहीं थी। ऐसा अपार साहस सत्य से भी बड़ा है। क्योंकि कोई लेखक अपनी कहानी में हमेशा अनेक स्वरों और अनेक स्तरों पर बात करता है, वह तनकर नहीं बल्कि निहुरकर। भुनेश्वर जी अपनी ईमानदारी और गहरी संवदेनशील दृष्टि के कारण वह न केवल स्वप्न द्रष्टा, बल्कि कालद्रष्टा थे। इनकी कहानियों में लोक द्वन्द्व व जीवन का लोक द्वन्द्व है। जिसमें युगीन चेतना का संस्कार बहुत सलीके से फलित हुआ है। जिसका जुड़ाव मनुष्य के ह्रदय से है। कभी मनुष्य की विकृतियों, खोखलेपन, और कृत्रिमता को उद्धाटित करते हैं तो कभी ऊपरी आदर्श के दिखावे के नीचे छिपे कलुष को वे उधाड़ कर सामने रख देते हैं। उनका व्यंग कडुवा और प्रत्यक्ष होता है। जिससे पाठक या दर्शक तिलमिला उठता है। समस्याओं का समाधान देने में उनकी कोई रूचि नहीं है। वे मानते हैं कि समाधान ढूंढेंगे वे रोग ग्रस्त हैं। भुनेश्वर जी उसको उजागर करते हैं, और संदेश देते हैं कि जिन्दगी तो स्वयं बादशाह है। इसको तबीयत से जीना चाहिए अकबर बन सिकन्दर के जीवन को देखा जा सकता है।

निष्कर्ष

सच में भुनेश्वर जी का अपने समय और समाज पर गजब की समझ और पकड़ थी। सबसे बड़ी बात है लोगों के साथ उष्मा भरा रिश्ता, मानवीय सम्बन्ध, प्रतिभा के धनी व्यक्तित्व ने इतना काम किया है जिसे एक आलेख में समेटना सम्भव नहीं हैं। आज तो उत्तर आधुनिकता संस्कृति है, जिसमें हम सब कुछ अच्छा घटित होते देखना चाहते हैं जबकि सुख–दुःख, हार–जीत, सफलता–असफलता, किसी के भी जिन्दगी की सामान्य सी बात है। वास्तव में बन्धन जवाब देही से गुरेज करती आज की नई पीड़ी की सारी खुशियाँ एक मुश्त चाहिए। जबकि दुःख का एक सितारा क्या टूटे उन्हें अपनी जिन्दगी जीना भी पहाड़ सा बोझ लगने लगता है। आज की महानगरीय काया में पलते–बढ़ते नौजवानों को यही बड़ी दिक्कत है कि उनमें दुःख सहने की क्षमता नहीं है। वे परिस्थितियों से या किसी अनिष्ट से इस कदर घबरा जाते हैं मानों अब उनकी जिन्दगी का कोई मकसद बचा ही नहीं। नवाचार और नवोन्मेष की डींगे हॉकेते अपने देश में युवाओं के भीतर फैलते तनाव, अवसाद, कुंठा, आत्महत्या की बढ़ती प्रवृत्ति इसी संकट के मूल में हैं। जैसा कि 1 अप्रैल 2019 के हिन्दुस्तान में सहायक प्रोफेसर ने छत से कूद कर हत्या करती है। भुनेश्वर जी इन सारी समस्याओं का समाधान दिया है। भविष्य में मानुष सम्बन्धों के मानवीय और मूल्यों–आधारित बचे रहने की चिंताओं का सूत्र दिया है। अपने आस–पास के अनुभवों की आत्मीय अनुभूति से उपजी है। इस पहरूए समय में भी भुनेश्वर की पैनी धार वाली कहानियाँ, एकांकियाँ, जुझने की मानसिक तैयारी देती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

मैं असली खुदा बनकर खेला बरखुरदार– अरविन्द कुमार, हंस, जनवरी– 2019, पृ0 40

मैं असली खुदा बनकर खेला बरखुरदार– अरविन्द कुमार, हंस, जनवरी– 2019 पृ. 40

मैं असली खुदा बनकर खेला बरखुरदार– अरविन्द कुमार, हंस, जनवरी– 2019 पृ. 40

मैं असली खुदा बनकर खेला बरखुरदार– अरविन्द कुमार, हंस, जनवरी– 2019 . पृ. 40

मैं असली खुदा बनकर खेला बरखुरदार– अरविन्द कुमार, हंस, जनवरी– 2019 पृ. 41

मैं असली खुदा बनकर खेला बरखुरदार– अरविन्द कुमार, हंस, जनवरी– 2019 . पृ. 42

शोकगीत– भुनेश्वर (अंगेजी कविता का अनुवाद) हंस, पत्रिका जनवरी 2019 पृ. 42

हिन्दी गद्यः विन्यास और विकास – रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ. 138–139